"आध्यात्मिककरण" के नाम पर केन्द्रीय मानव संसाधन मंत्री मुरली मनोहर जोशी ने अपना एजेण्डा थोपना चाहा था जो अन्य दलों के शिक्षामंत्रियों के विरोध के कारण सफल नहीं हो सका। संघ के शिक्षा प्रकोष्ठ विद्या भारती के 'विशेषज्ञों' द्वारा की गयी इन सिफारिशों में कहा गया था कि "प्राथमिक से उच्चतम स्तर तक के पाठ्यक्रमों को भारतीय, राष्ट्रवादी एवं आध्यात्मिक बनाया जाये।" वह चाहते थे कि संघ परिवार की अवधारणावाली संस्कृति और हिन्दुत्व को पाठ्यक्रम का अभिन्न और अनिवार्य अंग बनाया जाये। जाहिर है कि एन.सी.ई.आर.टी. द्वारा प्रकाशित पुस्तकों के संशोधन-पुनर्लेखन की कोशिश उनकी इसी इच्छा का नतीजा है। यह अनायास ही नहीं हुआ था कि केन्द्रीय विद्यालयों के राजनीति विज्ञान की एक पाठ्यपुस्तक के पुनर्मुद्रण के दौरान 'मार्क्सवाद' शीर्षक अध्याय ही छूट गया।

यूं तो इतिहास को विकृत करने की साजिशें पूंजीवादी सत्ताधारियों द्वारा लगातार चलती रही हैं। लेकिन, गतिरोध के वर्तमान दौर में इन कट्टरपंथी नवफासिस्टों ने अतर्कपरक, अवैज्ञानिक विचारों के प्रसार के लिए इतिहास के "पुनर्लेखन" पर जोर देना शुरू किया है। जैसे-जैसे संघ-विहिप-भाजपा कंबाइन की राजनीतिक ताकत बढ़ती गयी इसने प्रगतिशील जनपक्षधर संस्थानों में घुसपैठ शुरू कर दी। केन्द्र सरकार के स्तर पर उसे ऐसा करने का पहला मौका 1977 में जनता पार्टी की सरकार के दौरान मिला था। उस वक्त सरकार में शामिल भाजपा (तत्कालीन भारतीय जनसंघ) घटक ने पाठ्यक्रमों पर हमला बोला था। अपना पहला निशाना उसने 'इतिहास' को बनाया। उस वक्त उसने 'राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद' से प्रकाशित इतिहास की पुस्तकों के 'पारंपरिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों' से अलग-थलग होने का हंगामा मचाते हुए इन्हें पाठ्यक्रम से निकालने की मांग की थी। सभी पुस्तकें तो नहीं लेकिन प्रसिद्ध इतिहासकार रामशरण शर्मा की पुस्तक 'प्राचीन भारत' को हटवाने में वह कामयाब भी रहा था। (बाद में कांग्रेसी सरकार को इसे वापस लेना पड़ा था।) यही वह वक्त है जब तत्कालीन सूचना एवं प्रसारण मंत्री लालकृष्ण आडवाणी ने मीडिया में संघ पोषितों को घुसाकर जगह-जगह 'सेट' कर दिया था। तब से लेकर आज तक भाजपा ने मीडिया में व्यापक स्तर पर संघी घुसपैठ की कोई कोशिश हाथ से निकलने नहीं दी। यहां तक कि संघी भोंपू 'पांचजन्य' पर और

(शेष पृष्ठ 25 पर)

'संस्कृति के ठेकेदारों' के बढ़ते फासिस्ट हमले

विजयशंकर तिवारी

भारतीय संस्कृति के स्वयंभू रक्षकों ने कानून, संविधान, न्यायपालिका—सभी को ठेंगे पर रखते हुए संस्कृति के क्षेत्र में गुण्डागर्दी का प्रदर्शन तेज कर दिया है। इन "हिन्दुत्ववादियों" के हौसले बाबरी मस्जिद के ध्वंस के बाद से, विशेषतया भाजपा के सत्ता में आने के बाद लगातार बुलन्द होते गये हैं।

संघ कबीले (राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और उसकी छत्रछाया में चलने वाले तमाम संगठन) द्वारा फिल्म 'फायर' के बाद दीपा मेहता की नई फिल्म 'वाटर' की शूटिंग रोकने के लिए वाराणसी में जबर्दस्त तोड़-फोड़ और हुड़दंग मचाया गया। हालांकि फिल्म की पटकथा को सूचना और प्रसारण मंत्रालय द्वारा भी स्वीकृति मिल गयी थी और उत्तर प्रदेश सरकार ने भी शूटिंग की इजाजत दे दी थी। इजाजत भाजपा सरकारों ने दी थी और बावेला मचाया संघ के अन्य मुखौटों—विश्व हिन्दू परिषद, बजरंग दल, ज्ञानवापी मुक्ति परिषद, संस्कार भारती ने।

'वाटर' के बाद संघ कबीले का निशाना बने उत्तर प्रदेश में संत वेलेंटाइन। 'वेलेंटाइन डे' (14 फरवरी) को प्रदेश भर में प्रेमी युगलों की पिटाई हुई। कहीं इन्हें मुर्गा बना दिया गया. तो कहीं संस्कृति के ठेकेदारों ने लड़कों से लड़कियों के पैर धुलवाये, राखियां बंधवाई। रेस्टोरेंट, फूल की दुकानों, ग्रीटिंग कार्ड सेंटरों पर तोड़ फोड़ की, प्रेमी जोड़ों को अपमानित किया। 'संस्कृति रक्षा' के लिए दहशत फैलाने का यह ठेका 'अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद' ने उठा रखा था। यही नहीं, आगरा कालेज के प्राचार्य और प्राक्टोरियल बोर्ड के सदस्य कालेज के गेट पर सुबह से ही जमा होकर छात्र-छात्राओं के बैग की तलाशी ले रहे थे और जिनके पास से गुलाब का फूल या ग्रीटिंग कार्ड बरामद हो जाता उनके परिचय पत्र ही जब्त कर ले रहे थे।

इसके साथ ही विद्यार्थी परिषद ने जींस पहनने वाली छात्राओं पर हमला बोलकर एक नया आतंक राज्य कायम करने की भी कुचेष्टा की थी जिसका छात्राओं द्वारा उग्र प्रतिवाद करने के कारण इस मामले में सरकार को हस्तक्षेप करना पड़ा था। ये तो महज चन्द बानगियां हैं। महज पिछले एक वर्ष की घटनाओं पर ही निगाह दौड़ायें तो इन तथाकथित संस्कृति रक्षकों की ध्वंसात्मक कार्रवाइयों का पूरा चिट्ठा तैयार हो जायेगा। उन्होंने पुणे में संत तुकाराम के जीवन पर मंचित नाटक के विरोध में हंगामा किया, जम्मू के निकट अखनूर में कबीर पंथियों पर आक्रमण किया तथा कबीर की साखियों को जलाया, कर्नाटक में टीपू सुल्तान को 'साम्प्रदायिक' करार देते हुए उनकी 200वीं जयंती का कार्यक्रम नहीं होने दिया। मुंबई में मराठी साहित्य सम्मेलन पर बाल ठाकरे ने प्रहार किया तो मुजफ्फरनगर में भारत-पाक मुशायरे के संयोजक के घर पर हमला बोला गया। दिल्ली के जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय में हुए भारत-पाक मुशायरे में उन्होंने बवाल किया पर वहां छात्रों ने उनकी पिटाई कर दी।

बंगलूर में साम्प्रदायिकता के खिलाफ नाटक कर रहे 'समुदाय' नामक थियेटर ग्रुप के रंगकर्मियों के साथ मारपीट हुई तो लखनऊ में 'सहमत' के कार्यकर्ताओं पर नुक्कड़ नाटक के दौरान हमला बोला गया और जबलपुर में उदयप्रकाश की चर्चित कहानी 'और अंत में प्रार्थना' के नाट्य मंचन को तोड़-फोड़ करके बन्द करवा दिया गया। प्रसिद्ध फिल्म अभिनेता दिलीप कुमार के पाकिस्तानी खिताब 'निशान-ए-इम्तियाज' के खिलाफ बवाल मचाया गया तो मकबूल फिदा हुसैन की पेंटिंग जलाने और 'फायर' फिल्म दिखाने वाले सिनेमाघरों में आगजनी जैसी अनगिनत घटनाओं की पूरी एक फेहरिस्त है। हालात यह है कि अब आप कोई भी नाटक तभी कर सकते हैं जब उसकी पटकथा दिखा ली जाये ओर उनकी स्वीकृति ले ली जाये।

संस्कृति के इन पहरुओं के हौसले आज इतने बुलन्द हैं कि वे भगतसिंह सरीखे क्रान्तिकारियों पर भी हमला करने से बाज नहीं आते। पिछले वर्ष पिलानी (राजस्थान) में इन तत्वों ने शहीद भगतसिंह की प्रतिमा को क्षतिग्रस्त कर दिया क्योंकि वहां के कुछ जनवादी संगठन भगतसिंह के धर्म निरपेक्ष विचारों को प्रचारित कर रहे थे।

(शेष पृष्ठ 25 पर)

विश्वविद्यालय में आर्थिक अनियमितता और अव्यवस्था के खिलाफ आवाज उठाई थी। प्रो. कट्ट की पत्नी ने इस घटना के पीछे प्रशासन के हाथ होने का शक जताया है। इन सारी परिस्थितियों से, जो उनके खिलाफ जा रही हैं, निपटने के लिए ही कुलपति महोदय विश्वविद्यालय के कार्य परिषद के सदस्यों से लेकर राजनीतिज्ञों, और विजिटर के सचिव तक पर मानद उपाधियों की बारिश कर रहे हैं।

अपना अस्तित्व बचाने की कुलपति महोदय की इस मजबूरी और अकादमिक संस्थानों में भगवा घुसपैठ की भाजपाई मुहिम के मेल से आज बी.एच.यू. का शैक्षणिक वातावरण बेहद घुटनभरा हो चुका है। छात्रों-शिक्षकों-कर्मचारियों में प्रशासन की निरंकुशशाही का आतंक जमाने की नित नयी-नयी कोशिशें होती रहती हैं। छात्र संघ निलम्बित किया जा चुका है और अधिकांश छात्र नेताओं का निष्कासन हो चुका है। आज परिसर में आम छात्रों की कोई मजबूत संगठित आवाज मौजूद नहीं है, नतीजतन आम छात्र प्रशासन की कारगुजारियों का मूकदर्शक बना हुआ है।

विश्वविद्यालय प्रशासन के तानाशाही रवैये का विरोध करने वाले चुनावी छात्र नेता और पूंजीवादी चुनावी पार्टियों से जुड़े हुए छात्र संगठन अपनी अवसरवादिता के कारण आम छात्रों में विश्वास खो चुके हैं, इसलिए उनके संघर्षों में आम छात्रों की शिरकत लगभग नगण्य है। घोर अवसरवादिता और सुविधापरस्ती की शिकार शिक्षक राजनीति भी आज नखदन्त हीन हो चुकी है। कर्मचारी राजनीति की भी यही दशा है। इसलिए प्रशासन को कोई प्रभावी चुनौती नहीं मिल रही है। इस परिस्थिति में, निष्कण्टक होकर वह तमाम छात्र-शिक्षक- कर्मचारी विरोधी कदमों को लागू करता जा रहा है। हर मुमकिन रास्ते से विश्वविद्यालय में संघी घुसपैठ लगातार जारी है।

परिसर में व्याप्त जड़ता और विकल्पहीनता की इस विकट स्थिति को तोड़ने के लिए संवेदनशील एवं बहादुर छात्रों की साहसिक एवं सृजनात्मक पहलकदमी की जरूरत है। जब तक यह पहलकदमी नहीं होती हालत बदतर ही होते जायेंगे। यह पहलकदमी कब होगी इसके बारे में शायद ठीक-ठीक बताना सम्भव न हो लेकिन देर-सबेर यह होगी जरूर, क्योंकि जहां दमन होता है, प्रतिरोध के स्वर भी वहीं मुखरित होते हैं। ●

सामाजिक-सांस्कृतिक ताने-बाने को साम्प्रदायिक रंग में रंगने की कुचेष्टाएं

(पृष्ठ 23 का शेष)

उसके अनुषांगिक छात्र संगठन अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के पचास वर्ष पूरे होने पर दूरदर्शन से विशेष कार्यक्रम तक प्रसारित करवाये।

द्वितीय विश्वयुद्ध के समय से ही फासीवाद के खिलाफ संघर्षरत और एक लम्बी गौरवशाली परम्परा वाले 'भारतीय इतिहास कांग्रेस' में भी संघ कबीला जब-तब सेंध मारने की असफल कोशिश करता रहा है। 1989 में गोरखपुर में आयोजित इतिहास कांग्रेस पर कट्टरपंथियों द्वारा कब्जा जमाने की नापाक कोशिशें तथा 1991 में उज्जैन कांग्रेस को मध्यप्रदेश की तत्कालीन भाजपा सरकार द्वारा असफल करने की साजिशों को इसी रोशनी में देखा जा सकता है। बाबरी मस्जिद/रामजन्म भूमि विवाद को "साक्ष्यों" से परिपूर्ण करने और इतिहास के लिए "आस्था का प्रश्न" प्रधान बना देने की गरज से 'भारतीय इतिहास और संस्कृति सोसायटी' का अस्सी के दशक में संघी इतिहासकारों द्वारा पुनर्गठन एवं संघ पोषित 'इतिहास संशोधक मण्डल' की स्थापना जैसे ढेरों प्रयास इन कट्टरपंथियों द्वारा लगातार जारी हैं। इस दिशा में अपने ताजा प्रयासों के तहत भारतीय पुरातात्विक सर्वेक्षण को भी संघ परिवार के 'पुरातत्वविदों' ने अपने कब्जे में ले लिया है और पुरातात्विक उत्खनन एवं सर्वेक्षण की स्थापित वैज्ञानिक प्रक्रियाओं को ठेंगा दिखाते हुए अपनी विशिष्ट "इतिहास-दृष्टि" से उत्खनन एवं सर्वेक्षण में जुट गये हैं।

यह तथ्य भी अब सर्वविदित है कि 1990 में उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान और हिमाचल प्रदेश में भाजपा सरकार बनने के बाद पाठ्यक्रमों में कितने बड़े पैमाने पर फेरबदल किा गया था! भाजपा शासित इन राज्यों की पाठ्यपुस्तकों में पौराणिक विश्वासों को 'तथ्यात्मक इतिहास' के रूप में शामिल किया गया था। इन्हीं प्रक्रियाओं के अगले क्रम में कई विश्वविद्यालयों में संघ काडर के लोगों की भरती हुई और अपने कुलपति बैठाये गये। 'वन्देमातरम' को लेकर विवाद शुरू करने के पीछे की भी इनकी कुचेष्टा स्पष्ट है। उत्तर प्रदेश में स्कूलों में सरस्वती के चित्र को सामने रखकर प्रार्थना करना अनिवार्य बनाने के प्रश्न पर उठे विवाद और आपसी अन्तरविरोध के कारण तत्कालीन शिक्षा मंत्री के इस्तीफे की घटना किसी से छिपी नहीं है।

इतिहास को सिर के बल खड़ा करने का जो कुत्सित प्रयास विगत डेढ़ दशक से जारी है, आज वह एक खतरनाक मुकाम पर पहुंच गया है। सत्ता के शीर्ष पर पहुंचे पुरातनपंथियों द्वारा समाज को एक बार फिर इतिहासविहीन युग की ओर ढकेला जा रहा है। भाजपा सरकार देश के सामाजिक- सांस्कृतिक ताने-बाने को हिन्दू फासिस्ट साम्प्रदायिक रंग में रंगने के हर अवसर का, हर माध्यम का उपयोग बखूबी कर रही है। कहने की जरूरत नहीं कि इनकी छापों का समाज पर जो प्रभाव पड़ा है, वह इनके सत्ता में न रहने पर भी फासिज्म को खाद-पानी देता रहेगा।

इतिहास के इस कठिन अंधेरे दौर में अंधराष्ट्रवादी फासिस्ट शक्तियों के इन सांस्कृतिक-वैचारिक हमलों से एक बार फिर जनपक्षधर, इतिहास निर्माता शक्तियों को सचेत होना होगा। इस विषाक्त वृक्ष की टहनियों पर नहीं इसकी जड़ पर प्रहार करना होगा। इतिहास को चाहे धूल और राख की जितनी भी परतों से ढकने की कोशिश की जाये, सच को कभी झुठलाया नहीं जा सकता। सच यही है कि इतिहासद्रोही ऐसी फासिस्ट शक्तियां अतीत में भी कूड़ेदान में फेंकी जा चुकी हैं और भविष्य के लिए भी इनके वास्ते माकूल सजा मुकर्रर हो चुकी है, जब जनता का तूफान उठेगा और इनके ताबूत में अन्तिम कील ठोंक देगा। ●

'संस्कृति के ठेकेदारों' के बढ़ते फासिस्ट हमले

(पृष्ठ 23 का शेष)

चाहे "भारतीय संस्कृति" की "रक्षा' के नाम पर ये विध्वंसक कार्रवाइयां हों या आस्ट्रेलियाई मिशनरी ग्राहम स्टेंस और मथुरा के क्रिश्चियन अध्यापक की नृशंस हत्या की घटना हो अथवा 'आह्वान कैम्पस टाइम्स' के कार्यालय पर आधी रात में सादी वर्दीधारी पुलिसिया छापामारी की घटना; ये नये दौर के फासीवादी उभार का ही द्योतक है। हिन्दूवादी साम्प्रदायिक फासिस्ट ताकतें अब अपने पूरे रंग में आने लगी हैं। इसलिए, इनका वैचारिक-सांस्कृतिक स्तर पर ही नहीं बल्कि भौतिक शक्ति संगठित कर मुकाबला करने की तैयारियों को तेज कर देना होगा। ●